International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 57-58

समय, समाज और स्त्री

दीपिका सिंह

बी०एड्० छात्रा डा० रा० म० लो० अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

आज का समय एक ऐसा समय है जहां हम खुलकर जीने की सोचते हैं और स्वतंत्र मन से हर काम करना चाहते हैं तथा यह अपेक्षा करते हैं कि इसमें परिवार व समाज हमारा साथ दे। लम्बे समय से जिस प्रकार से समाज में गरीब और अमीर के मध्य एक बड़ा अन्तर रहा है, उनमें असमानताएं रहीं है उसी प्रकार स्त्री-पुरूष के मध्य भी एक बड़ी खाई रही है। स्त्रियों को सदियों से पुरूषों की अपेक्षा कम स्वतंत्रता प्राप्त रही है, उनके अधिकारों से उन्हें सदैव वंचित करने का नियम व षडयंत्र रचा जाता रहा है। स्त्री को पुरुष के बराबर अधिकार कभी नहीं दिए गए, चाहे वे आर्थिक हो, सामाजिक हो, राजनैतिक हो अथवा सांस्कृतिक हो। राजनीतिक एवं सामाजिक निर्णय लेने में महिलाओं की शगीदारी बेहद कम है। स्त्री हर जगह शोषण की शिकार होती दिखाई पड़ती हैं। बाल विवाह, सती प्रथा, दहेज प्रथा, यौन उत्पीड़न, लूट आदि बर्बर सामाजिक दंश को स्त्री ने ही भोगा है। जिस भी स्त्री के साथ बलात्कार होता है, वह कौमार्य अथवा सतीत्व–भंग की क्षति ही नहीं सहती बल्कि गहन भावनात्मक दंश, मानसिक वेदना, भय, असुरक्षा और अविश्वास प्रायः आजीवन उसका पीछा नहीं छोड़ते। कड़े और बेहतर कानून पारित हो जाने के बाद भी, जघन्य दुष्कर्मों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। विवाह के बाद भी कभी कभी उन्हें अकेलेपन, अनमेलपन, मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न के भय का सामना करना पड़ता है। मधु धवन जी स्त्री के अस्तित्व को, उसकी पीड़ा को उद्घाटित करते हुए लिखती हैं–

"मैं कौन हूँ?
एक लघु सा प्रश्न
पर गगन सा विस्तीर्ण, पर्वत सा दुर्गम।"

परन्तु समाज का स्वरूप अब बदल रहा है। वे शिक्षित और जागरूक हो रहीं हैं। शोषण और उपेक्षा के खिलाफ लड़ने के लिए उनमें साहस और चेतना अपनी जगह बना रहा है। लेकिन अभी भी समाज के पुरूष वर्ग द्वारा स्त्री का कई स्तरों पर (भावनात्मक, शारीरिक व मानसिक) शोषण किया जा रहा है जिसके लिए उनकी आर्थिक विपन्नता, अशिक्षा व साहस में कमी बहुत हद तक जिम्मेदार है।

हमें भी आज के समाज में वे सभी अधिकार मिलने चाहिए जो पुरूषों को प्राप्त हैं। हम स्त्री हैं तो हमें मात्र वस्तु अथवा अवसर के रूप में ना देखा जाए क्योंकि जैसा सबका समाज है वैसा ही समाज हमारा भी तो है फिर ये भेदभाव क्यों – षास्त्रों में तो लिखा है – पत्नी, पुरूष का आधा भाग है (फिर वह स्त्री होने का दुःख लेकर क्यों झेलती है?) तथा षास्त्रों में यह भी कहा गया है कि जहां नारी की पूजा होती है वहां देवता रमण करते हैं। पर आज के देवता (तथाकथित पुरूष वर्ग) भेड़िए की तरह हो गए हैं जो अवसर की तलाष में घात लगाए रहते हैं, पूजा करने की बात तो अकल्पनीय है।

प्राचीनकाल (मातृसत्तामक समाज) में नारी का हर प्रकार से सम्मान था। परन्तु उत्तर वैदिक काल में उनकी दषा आज की नारी दषा से मिलती जुलती दिखाई पड़ती है। समय जैसे–जैसे करवटें बदलता गया स्त्री की सामाजिक दषा और भी दयनीय होती चली गई। बौद्ध काल में भी स्त्री भोग्यामात्र ही समझी गई। मुसलमानों (मुगलों) आदि के षासनकाल में स्त्रियों की स्थिति मात्र मनोरंजन और भोगविलास की वस्तु के रूप में ही रहा उसके सारे सामाजिक अधिकार छीन लिए गए, यहां तक सन्तों ने भी स्त्री मन को चोट पहुंचाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी। उन्होंने नारी को – माया, ठगनी, अवगुणों की खान आदि कहकर सम्बोधित किया। हिन्दी साहित्य में रीतिकाल खण्ड को देखते ही बनता है। जिसमें स्त्री के केवल मांसल रूप को ही प्रमुखता प्रदान की गई है अर्थात नारी की स्थिति मात्र सौन्दर्य और मांसलता की मूरत में ही मान ली जाती है। परन्तु आधुनिक काल में स्त्रीवादी आंदोलन एक बड़ा रूप लेती है जो कि स्त्री को घर की चारदिवारी व चूल्हा – चौका से निकालकर उसके अस्तित्व का उसे बोध कराती है। आज की नारी अपने अधिकारों के प्रति सजग व सचेत रहना चाहती है वह केवल श्रद्धा बनकर नहीं बल्कि पुरूष के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की और हर काम को पूर्ण मनोयोग से करने की हौसला रखती है। नारी मुक्ति का स्वर हमें पन्त जी की अग्रिम पक्ति में सुनने को मिलती है–

''मुक्त करो नारी को मानव, चिर बंदिनी नारी को,
युग–युग की निर्ममकार से, जननी सखी प्यारी को।।''

समाज में समानता और समता महिलाओं के सशक्तिकरण द्वारा ही सम्भव है परन्तु सशक्तिकरण से तात्पर्य यह नहीं की वे पुरूष बन जाए और ना ही ये कि पुरूषों को महिला बना दिया जाए बल्कि पितृसत्तामक ढ़ांचे में बदलाव कर ऐसी स्थिति का निर्माण करना जिससे उन्हें – लिंग, प्रकृति, बौद्विकता व देंह की बनावट आदि के आधार पर पृथक ना किया जाए और ना ही उन्हें इन आधारों पर सामाजिक, राजनैतिक व बौद्विक रूप से कमजोर और असहाय समझा जाए। पुरूषों तथा स्त्रियों के मध्य कर्तव्यों और अधिकारों का बटवारा एक समान रूप से होना चाहिए मगर देखा जाए तो वर्तमान में नारी मुक्ति आंदोलन की गूंज एक तरफ और नारी अस्मिता की वास्तविकता दूसरी तरफ है। कहने का तात्पर्य यह है कि आज भी हमारा समाज रूढ़ीवादी सोच और दकियानूसी परंपरा से मुक्त नहीं हो पाया है। आज हमें हमारा अधिकार तभी मिल सकता है जब हम अपने अधिकारों के सही मायने को समझेंगे। हमारे विचार, हमारा हौसला ही तरह–तरह के रीति-रिवाज, बन्धनों को तोड़ सकता है जो हमारे पथ की बाधक बनी हुई है।

आज भूमंडलीकरण के दौर में प्रगतिशीलता के नाम पर शोषण के नये नये आयाम गढ़े जा रहें हैं ऐसे में स्त्री को अधिक सचेत व जागरूक रहने की जरूरत है। मेरा मत है कि इस अनसुलझे समाज में स्त्री को अपना यथोचित स्थान प्राप्त करने के लिए स्वयं

ही आगे आना होगा, जिसके लिए उसे शिक्षित,जागरूक और स्वावलम्बी होने की दशा व दिशा का निर्माण स्वयं करना होगा। नारी तुम शक्ति का अवतार हो, फिर क्यूं सहती हो अत्याचार ?

सन्दर्भ सूची

1. डॉ0 संजय गर्ग, (सं.)- स्त्री विमर्श का कालजयी इतिहास, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण, 2014.
2. (पत्रिका) योजना, नारी सशक्तिकरण, अंक 9, सितंबर 2016